4.4. जैनों का आत्मा या जीव-संबंधी विचार *(Jain Conception of Soul or Self or Jiva)*

सभी आस्तिक दर्शन किसी-न-किसी रूप में आत्मा या जीव की सत्ता स्वीकार करते हैं; किंतु आत्मा के स्वरूप के बारे में मतभेद पाया जाता है। सांख्य और वेदांत आत्मा को नित्य और अविकारी (eternal and unchanging) मानते हैं। न्याय और वैशेषिक दर्शन भी आत्मा को एक और नित्य बताते हैं। बौद्धदर्शन ने आत्मा को 'क्षणिक परिवर्तनों का प्रवाह' कहा है। जैनदर्शन न तो आत्मा को पूर्णतया नित्य मानता है और न पूर्णतया परिवर्तनशील ही। इसके अनुसार आत्मा अपने स्वरूप को कभी नहीं छोड़ने के कारण 'नित्य' है और सदैव एकरूप में नहीं रहने के कारण 'परिवर्तनशील' भी है। यह आत्मा कर्ता (doer), भोक्ता (enjoyer) और ज्ञानी है। यह सूर्य की भाँति स्वयं प्रकाशयुक्त होते हुए दूसरों को भी प्रकाशित करती रहती है।

जीव या आत्मा स्थान घेरनेवाला वह द्रव्य है, जिसमें प्राण या जीवन पाया जाता है। जैनों ने आत्मा और जीव को एक ही अर्थ में स्वीकार किया है। जीव का आवश्यक गुण चैतन्य (consciousness) है। चैतन्य सभी जीवों में पाया जाता है, किंतु किसी में विकसित अवस्था में रहता है, तो किसी में अविकसित अवस्था में।

चार्वाकदर्शन शरीर को ही आत्मा मानता है। जैनों ने चार्वाकमत का खंडन निम्नांकित तर्कों के आधार पर किया है—

(i) चार्वाक के अनुसार चेतना आत्मा का नहीं, बल्कि शरीर का गुण है। इसके विपरीत, जैनों का तर्क यह है कि यदि चेतना सचमुच शरीर का गुण रहती तो यह सदैव शरीर के साथ पाई जाती। किंतु, अनुभव इस बात का साक्षी है कि चेतना और शरीर सदैव साथ नहीं रहते। मूर्च्छा या मृत्यु की अवस्था में शरीर तो रहता है, किंतु चेतना लुप्त हो जाती है। इससे पता चलता है कि शरीर चेतना के बिना भी रह सकता है। अतः, चेतना शरीर का गुण या लक्षण नहीं कही जा सकती।

(ii) यदि शरीर का गुण चैतन्य है, तो फिर शरीर में परिवर्तन के साथ-साथ चैतन्य को भी परिवर्तित होते रहना चाहिए। मोटे शरीर में मोटी चेतना, दुबले शरीर में दुबली चेतना, लंबे शरीर में लंबी चेतना एवं नाटे शरीर में नाटी चेतना रहनी चाहिए। किंतु, ऐसा सोचना हास्यास्पद है। अतः, चेतना शरीर का गुण नहीं है।

(iii) चार्वाक बोलचाल की भाषा के आधार पर आत्मा और शरीर को अभिन्न सिद्ध करना चाहते हैं। इनके अनुसार व्यक्ति अधिकतर कहता रहता है— 'मैं मोटा हूँ', 'मैं अंधा हूँ', 'मैं बहरा हूँ', इत्यादि । ये वाक्य चार्वाक के अनुसार, आत्मा को शरीर से अभिन्न बताते हैं। जैनों का इसके विरुद्ध यह तर्क है कि बोलचाल की भाषा को युक्ति का रूप देना अनुचित है। शरीर के साथ अत्यधिक घनिष्ठता होने के कारण व्यक्ति उपर्युक्त वाक्यों का प्रयोग करता रहता है। इसलिए, बोलचाल की भाषा के आधार पर आत्मा को शरीर बताना सर्वथा अनुपयुक्त है।

(iv) यदि बोलचाल की भाषा को कुछ क्षण के लिए प्रमाण मान भी लें, तो इससे आत्मा और शरीर की भिन्नता भी सिद्ध की जा सकती है। हम अधिकतर ऐसा बोलते हैं—'मेरी आँखें', 'मेरा शरीर', 'मेरे हाथ' इत्यादि। यहाँ 'मेरा' स्वामी (possessor) है और शरीर पर उसका आधिपत्य है। इससे शरीर से पृथक आत्मा का अस्तित्व प्रमाणित होता है।

Scanned by CamScanner

आत्मा के अस्तित्व के लिए प्रमाण—जैनधर्म में आत्मा का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित प्रमाण दिए गए हैं—

(i) आत्मा का साक्षात ज्ञान—गुणों के प्रत्यक्ष द्वारा हमें उनके धारण करनेवाले पदार्थ का भी प्रत्यक्ष हो जाता है। चीनी के गुणों (रुखड़ापन, मिठास, खारापन इत्यादि) के प्रत्यक्ष होने पर इन गुणों के आधार (substratum) के रूप में चीनी का प्रत्यक्ष होता है। इसी प्रकार, जब हमें आत्मा के गुणों (जैसे सुख, दुःख, हर्ष, विषाद, राग, द्वेष आदि) का प्रत्यक्ष होता है, तो इनके आधार के रूप में आत्मा का भी प्रत्यक्ष हो जाता है। इस प्रकार, आत्मा का अस्तित्व साक्षात ज्ञान द्वारा सिद्ध होता है।

(ii) शरीर के संचालक के रूप में—शरीर सदैव सक्रिय नहीं रहता। कभी तो यह चलता है और कभी स्थिर रहता है। कभी आँखें देखती हैं, तो कभी आँखें बंद रहती हैं। कभी हाथ दान देते हैं, तो कभी ये दूसरों की गर्दन भी दबा देते हैं। अब प्रश्न है कि शरीर और इनकी इंद्रियों के कार्य यों ही होते रहते हैं या किसी संचालक के इशारे पर होते हैं। शरीर एक मशीन की भाँति है। जिस प्रकार बिना संचालक के मशीन कार्य नहीं कर सकती, उसी प्रकार बिना आत्मारूपी संचालक के शरीर के व्यापार नहीं हो सकते। अतः, शरीर के संचालन के लिए आत्मा की सत्ता में विश्वास आवश्यक है।

(iii) ज्ञाता के रूप में—इंद्रिय और वस्तु के बीच संपर्क होने से ज्ञान प्राप्त होता है। आँखों और तारों का संपर्क होने से तारों का ज्ञान और जीभ का आम के साथ संपर्क होने से आम के स्वाद का ज्ञान मिलता है। अब प्रश्न है—इंद्रिय और वस्तु के बीच संपर्क (contact between sense organs and objects) होने से 'ज्ञान' किसे मिलता है? यह ज्ञान इंद्रियों को नहीं मिल सकता; क्योंकि इंद्रियाँ ज्ञानप्राप्ति के साधन (means) हैं, न कि साध्य। जैनदर्शन के अनुसार यह ज्ञान निश्चय ही आत्मा को मिलता है। इस प्रकार, ज्ञाता के रूप में आत्मा को मानना आवश्यक है।

(iv) निमित्तकारण के रूप में—केवल उपादानों (materials) से ही किसी वस्तु का निर्माण नहीं हो सकता। लकड़ी, लोहे आदि के रहने से कुर्सी नहीं बन जाती। इसके लिए 'कारीगर' की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ कारीगर 'निमित्तकारण' (efficient cause) है। इसी प्रकार, केवल पुद्गलों (material substances) के संयोग से शरीर नहीं बन जाता और न इसका विकास ही होता है। इसके लिए निमित्तकारण के रूप में आत्मा की सत्ता मानना आवश्यक है।

आत्मा या जीव की विशेषताएँ—जैनदर्शन के अनुसार आत्मा की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(a) आत्मा का प्रधान लक्षण चैतन्य है। इसे अन्य वस्तुओं की चेतना तो रहती ही है, अपनी चेतना (self-consciousness) भी रहती है।

(b) आत्मा सदैव ज्ञाता (knower) है। इसे कभी ज्ञान का विषय (object of knowledge) नहीं बनाया जा सकता।

(c) यह कर्ता (doer) है। अपने कर्मों द्वारा यह अपना भाग्यविधाता स्वयं है।

(d) यह भोक्ता (enjoyer) है। अपने कर्मों का फल यही भोगती है।

(e) आत्मा का स्वरूप सदैव अपरिवर्तित होने के कारण इसे नित्य कहा जाता है और इसकी अवस्थाओं में परिवर्तन होते रहने के कारण इसे परिवर्तनशील भी कहा जाता है। इस प्रकार, यह उभयात्मक या नित्यानित्य है। इसे शरीर की भाँति नश्वर नहीं कहा जा सकता।

(f) जीव संख्या में एक नहीं, बल्कि अनेक हैं।

(g) आत्मा स्थान घेरती है। यह संपूर्ण शरीर में व्याप्त है। भौतिक पदार्थ जिस रूप में स्थान घेरते हैं, उस रूप में आत्मा स्थान नहीं घेरती। किसी खास स्थान को एक समय एक ही भौतिक द्रव्य ग्रहण कर सकता है। यदि कुर्सी पर कोई संदूक रखा है, तो फिर उस स्थान पर कोई अन्य भौतिक वस्तु नहीं रखी जा सकती। किंतु, स्थान घेरने का

Scanned by CamScanner

यह ढंग आत्मा के साथ लागू नहीं होता। एक ही समय एक ही स्थान में एक से अधिक आत्माएँ रह सकती हैं। जिस प्रकार किसी एक ही कमरे में विभिन्न दीपक एक साथ प्रकाश फैला सकते हैं, उसी प्रकार दो या दो से अधिक आत्माएँ एक ही समय एक ही स्थान को घेर सकती हैं। इस प्रकार, आत्मा के स्थान घेरने का तरीका भौतिक पदार्थों से सर्वथा भिन्न है।

(h) आत्मा का अनिश्चित आकार होता है। जैनदर्शन के अनुसार आत्मा का अपना कोई आकार नहीं होता। यह जिस शरीर में रहती है, उसी का आकार ले लेती है। हाथी के शरीर में विद्यमान आत्मा का आकार उतना ही विशाल होता है। जब इस आत्मा का पुनर्जन्म चींटी के रूप में होता है, यह आत्मा चींटी के आकार की हो जाती है। आत्मा का आकार उसी प्रकार अनिश्चित है, जिस प्रकार तरल, पदार्थों (जैसे पानी, तेल इत्यादि) का आकार। तरल पदार्थ भी जिस बरतन में रखे जाते हैं, उसी का रूप धारण कर लेते हैं। यदि पानी को गिलास में रखें, तो यह गिलास का आकार ग्रहण करता है और यदि इसे एक कटोरे में उलट दें, तो यह कटोरे का आकार ले लेता है।

पाश्चात्य विचारक **डेकार्ट** (Descartes) जैनों के आत्मा-संबंधी विचार से सहमत नहीं हैं। इनके (डेकार्ट के) अनुसार आत्मा का ऐकांतिक गुण 'विचार' (thought) है और शरीर का गुण 'विस्तार' (extension) है। **डेकार्ट** यह नहीं मानते कि आत्मा स्थान घेरती है अथवा विस्तारमय है। फिर भी, जैनमत का समर्थन कई अन्य भारतीय विचारक करते हैं। जैन या अन्य भारतीय विचारक आत्मा का प्रयोग उस अर्थ में नहीं करते, जिस अर्थ में डेकार्ट ने किया है।

Scanned by CamScanner